...और तुम

काव्य संग्रह

डॉ. प्रीति समकित सुराना

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

".... और तुम"

डॉ. प्रीति समकित सुराना

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी, मध्यप्रदेश (481331)

Antra Shabdshakti Prakeshan

संपादक- प्रीति समकित सुराना

आवरण चित्र- संदीप कुमार सोनी, वारासिवनी

मुख्य कार्यालय- 15 नेहरू चौक, वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र.) 481331

मोबाईल- 9009423393

ईमेल- antrashabdshakti@gmail.com

वेबसाईट- www.antrashabdshakti

प्रथम संस्करण- 2025, डॉ. प्रीति समकित सुराना

मूल्य- 200.00 रूपये

मुद्रक- सोनी कम्प्युटर्स, वारासिवनी

THE BOOK WRITTEN BY SADHNA CHIROLIYA

वैधानिक चेतावनीः- इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम में अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरूत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है। अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

"... और तुम" -

"लीक से हटकर, पारंपरिक सोच से इतर नवीन रचनात्मक विचारों की अभिव्यक्ति है संग्रह"।

लेखन की हर विधा में स्थापित नाम है **डॉ. प्रीति समकित सुराना**।

इनकी लेखनी में पृथक दृष्टिकोण दिखाई देता है जिसमें वैचारिक मंथन और अंतर्ज्ञान का प्रयोग प्रतिबिंबित होता है। विचार प्रबंधन में नवीनता की खोज में अमूर्त, ठोस या दृश्य अवधारणाओं का सृजन सदैव रचनात्मक विचारों को जन्म देता है।

प्रीति ने प्रस्तुत संग्रह में बाकायदा पाठक की **'माइंड मैपिंग'** की है। शब्दों से केवल एक दृश्य आरेख न बनाकर अवधारणाओं को व्यवस्थित क्रम दिया है तभी यह संग्रह भीड़ से अलग या लीक से हटकर दिखाई देता है। भावनाओं को संयोजित कर बड़ी सुगमता से प्रतिस्थापित किया है जिससे हर कविता अपने आप में **'स्टोरी बोर्डिंग'** प्रतीत होती है।

अपनी भूमिका में प्रीति ने स्वीकार किया है कि **"... और तुम"** शीर्षक के पीछे कोई एक व्यक्ति, कोई ठोस पहचान या कोई सीमित रिश्ता नहीं है। यह 'तुम' मन के अव्यक्त भावों की मूरत है जो प्रेम, प्रतीक्षा, संवाद, मौन और कभी-कभी मन में गूँजते अनुनाद की शाब्दिक अनुभूति है जिसे बड़े जतन से सहेजा है काग़ज़ पर।

पहली बार जब तुम सामने थे,
शब्द नहीं, एक मौन था-
जिसने सब कह दिया था-
मन समझ गया,
जिसे आँख अभी पहचान न सकी।

मन और आँखों के मध्य का यही विरोधाभास उस 'तुम' की तलाश है।

हम साथ थे,
पर कभी एक नहीं हुए-
हमने अपने अलगपन को भी
सम्मान दिया।

यही अलगपन कभी राधा कभी मीरा बन प्रेम की अलौकिक अनुभूति बन जाते हैं जिसमें मौन अनुनादित होने लगता है।

तुमने कभी छुआ नहीं
फिर भी मेरा अंतर्मन काँप उठा-

इन पंक्तियों में भी अबोल प्रेम का स्पर्श है।

मैं टूटती रही,
तुम थामते रहे-
बिना बोले।

समर्पण की डगर में एक और मील का पत्थर लगा दिया है इन भावों ने।

तुम्हारा मौन
मुझमें एक शांत ध्वनि बनकर बसता था
उस मौन में
बातें नहीं होती थीं,
भाव बहते थे।

ध्वनि का शांत होना ही मन की अशांति को जन्म देता है।

संग्रह में 50 रचनाओं का संकलन है जिसमें बचपन, मौसम, बारिश, धड़कन, ख़त, सपने, पलछिन, तन्हाई, भ्रम, मन की उधेड़बुन, आँसू, विरह, सन्नाटे, भूल, क्षमा, समर्पण, सफर, मंजिल, अधूरापन,

परछाईंयाँ, स्पंदन, सांझ, रात, सुबह, जीवन, पूर्णता, मृत्यु और इंतज़ार को उस "तुम" से सम्बद्ध कर मनोविज्ञान में ढाल दिया है।

उपसंहार है -
अब शब्द थक गये हैं,
भाव मौन हैं -
फिर भी अंत में
जो बचा है,
वो बस एक नाम है-
... और अंत में - तुम।

यह अंत नहीं है, अंत हो भी कैसे सकता है जब मौन मुखरित हो एक नई शुरुआत की पायदान पर खड़ा है...

मन को छूती, उद्वेलित करती कविताओं की अर्द्ध शतकीय पारी में प्रीति ने नवीन प्रयोगों, बिंबों और भावनाओं के ईंधन को जलाकर बड़ी धीमी आँच पर औंटाया है संवेदनाओं को तब जाकर सृजन में इतनी गहराई व माधुर्य दिखाई दिया है।

ढेर सारी बधाई और अशेष शुभकामनाएँ हैं इस संग्रह के साथ। साहित्य जगत में अपनी विशिष्ट पहचान बनाएगा यह ऐसा मेरा विश्वास है।

शुभाकांक्षी

मुकेश दुबे
सीहोर (म. प्र.)

भूमिका

“...और तुम” — एक आत्मीय सृजन यात्रा

यह पुस्तक मेरे भीतर बहुत समय से आकार ले रही थी - शब्दों में आने से बहुत पहले यह भावों में बह रही थी। कुछ रचनाएँ अनायास जन्मीं, कुछ वर्षोंतक मन में पकीं और कुछ तो केवल एक मौन अनुभूति बनकर मन के कोने में स्थिर थीं — जिन्हें शब्दों तक लाना आसान नहीं था।

"...और तुम" शीर्षक के पीछे कोई एक व्यक्ति, कोई ठोस पहचान या कोई सीमित रिश्ता नहीं है। यह 'तुम' मेरे लेखकीय अनुभव का वह भाव है, जो हर पाठक के लिए अलग हो सकता है। कभी वह प्रेम है, कभी प्रतीक्षा, कभी संवाद, कभी मौन, और कभी खुद के ही भीतर की गूंज। यह 'तुम' कहीं बाहर नहीं, बहुत बार भीतर ही उपस्थित है - कभी स्पष्ट रूप से, कभी आभास की तरह।

इस संग्रह की कविताएँ गद्यात्मक शैली में हैं - बिना छंद या तुक के - ताकि भावों को बिना किसी बनावट के, वैसे ही प्रस्तुत किया जा सके जैसे उन्होंने जन्म लिया। इन कविताओं में नाटकीयता नहीं है, बल्कि एक आत्मीय सच्चाई है, जो धीरे-धीरे पाठक को अपने साथ बहा ले जाती है।

पूरे संग्रह को मैंने इस तरह क्रमबद्ध किया है कि पाठक प्रेम की पहली आभा से लेकर पूर्णता के अंतिम बोध तक एक यात्रा का अनुभव करें। शुरुआत 'पहचान' से होती है, फिर भावनाएँ गहराती हैं - प्रेम, विश्वास, मौन, विछोह, आत्मावलोकन और अंततः स्वीकार और शांति तक पहुँचती हैं।

यह भूमिका लिखते समय मुझे यह भी अनुभव हुआ कि हर पाठक अपनी यात्रा में कभी न कभी 'मैं' होता है और सामने कोई 'तुम' — जो बहुत अपना होकर भी कई बार बहुत दूर होता है।
यह पुस्तक उनके लिए है —

जो कभी प्रेम में रहे हैं,
जो प्रेम में होकर भी चुप रहे हैं,
या फिर जिन्होंने कभी बिना कुछ कहे
किसी को बहुत कुछ कह दिया।
"...और तुम" मेरे मन की परछाई है,
जिसमें शायद आपको भी अपनी कोई परछाई दिखे।

✍ **डॉ. प्रीतिसमकित सुराना**

अनुक्रमणिका: "..... और तुम"

1.	पहली बार और तुम	11
2.	मैं और तुम	12
3.	मुस्कान और तुम	13
4.	स्पर्श और तुम	14
5.	आहट और तुम	15
6.	ख़ुशबू और तुम	16
7.	प्रेम और तुम	17
8.	चाहत और तुम	18
9.	विश्वास और तुम	19
10.	भरोसा और तुम	20
11.	मौन और तुम	21
12.	चुप्पी और तुम	22
13.	ख़ामोशी और तुम	23
14.	कविता और तुम	24
15.	बचपन और तुम	25
16.	मौसम और तुम	26
17.	बारिश और तुम	27
18.	धड़कन और तुम	28
19.	ख़त और तुम	29
20.	सपना और तुम	30

21. पलछिन और तुम 31
22. तन्हाई और तुम 32
23. दूरी और तुम 33
24. भ्रम और तुम 34
25. उधेड़बुन और तुम 35
26. पीड़ा और तुम 36
27. आंसू और तुम 37
28. विरह और तुम 38
29. सन्नाटा और तुम 39
30. रूठना और तुम 40
31. भूल और तुम 41
32. क्षमा और तुम 42
33. लौट आना और तुम 43
34. समर्पण और तुम 44
35. समझौता और तुम 45
36. सफर और तुम 46
37. मंज़िल और तुम 47
38. परछाई और तुम 48
39. अधूरापन और तुम 49
40. सपना टूटा और तुम 50
41. स्पंदन और तुम 51
42. साँझ और तुम 52

43. रात और तुम 53
44. सुबह और तुम 54
45. जीवन और तुम 55
46. पूर्णता और तुम 56
47. मौन संवाद और तुम 57
48. मृत्यु और तुम 58
49. इंतज़ार और तुम 59
50. ...और अंत में तुम 60

1. पहली बार और तुम

पहली बार जब तुम सामने थे,
शब्द नहीं, सिर्फ़ एक मौन था -
जिसने सब कह दिया।
मन समझ गया,
जिसे आँखें अभी पहचान न सकीं।
तुम कोई आवाज़ नहीं थे,
फिर भी भीतर गूंजते रहे।
मेरे होने में
तुम जैसे अनदेखे उपस्थित थे।
न परिचय, न परिचर्चा -
फिर भी अजीब सी आत्मीयता।
शायद वो पहली बार नहीं थी,
शायद कोई जन्मांतर था,
जो फिर से पलटकर आया।
पर इस बार तुम ठहरे रहे,
और मैं ठहर गई।
और उसी पहली बार में
कुछ भी नहीं बदला,
सिवाय इसके कि
अब मेरे हर एहसास में तुम थे।

2. मैं और तुम

“मैं” हमेशा पूरी थी —
पर तुम्हारे आने से
जैसे कोई अधूरी दीवार
सहारा पा गई।
तुम नहीं आए मुझे पूरा करने,
बस ‘मैं’ को ‘मैं’ होने की जगह देने।
हम साथ थे,
पर कभी एक नहीं हुए —
हमने अपने अलगपन को भी
सम्मान दिया।
मैंने तुमसे प्रेम किया,
तुमने मुझे मेरी ही नज़रों से देखा।
ना तुमने मुझे बाँधने की कोशिश की,
ना मैंने तुम्हें खोने का डर पाला।
‘मैं’ और ‘तुम’ के बीच
जो कुछ भी था,
वो प्रेम था —
पर स्वतंत्र प्रेम।
और यही प्रेम,
मेरे व्यक्तित्व की सबसे सुंदर परिभाषा बन गया।

3. मुस्कान और तुम

तुम्हारे साथ मुस्कान
बस होठों तक नहीं रुकती थी -
वो आँखों से होती हुई
मन तक पहुँच जाती थी।
तुम्हारा मज़ाक नहीं,
तुम्हारा मौन मुझे हँसाता था।
तुम्हारे पास कोई जादू नहीं था,
फिर भी उदासी पिघलती जाती थी।
मैंने जाना,
मुस्कुराना भी प्रेम की भाषा है।
तुम्हारे साथ मुस्कुराते हुए
मैंने कई बार रोना टाल दिया।
कभी ख़ुशी, कभी राहत,
कभी आभार -
हर मुस्कान में कुछ नया था।
तुमसे पहले
मुस्कुराना केवल आदत थी,
तुम्हारे बाद
इसे अर्थ मिल गया।

4. स्पर्श और तुम

तुमने कभी छुआ नहीं,
फिर भी मेरा अंतर्मन काँप उठा।
शब्दों में जो कोमलता थी,
वही शायद सबसे गहरा स्पर्श थी।
तुम्हारा होना
मेरे आसपास हवा जैसा था -
न दिखता, पर महसूस होता।
जब तुम साथ होते,
तो मन की सतह पर
एक शांत लहर चलती थी।
मैंने जाना -
स्पर्श केवल त्वचा तक सीमित नहीं,
वो आत्मा को भी छूता है।
तुमने मेरे भीतर के डर,
अतीत की राख,
और वर्तमान की उलझन
सब धीरे से सहलाए।
तुम्हारे बिना
मैं आज भी छुई जाती हूँ -
हर स्मृति में।

5. आहट और तुम

रात के सन्नाटे में
जब हर शोर थम जाता,
तुम्हारी आहट
मन की सीढ़ियाँ उतरती थी।
तुम कभी आए नहीं,
फिर भी प्रतीक्षा की आदत बन गए।
कभी पत्तों की सरसराहट में,
कभी पुराने गीतों की धुन में,
तुम आते रहे।
मैं दरवाज़ा खोलती रही,
हर बार बिना दस्तक के।
तुम्हारी आहट पहचानती थी
मेरी आत्मा -
भले ही कानों ने न सुनी हो।
कई बार तो तुम
मुझसे पहले मेरे कमरे में होते थे -
सोचों में, स्मृतियों में,
या बस एहसास में।
तुम्हारी आहटों ने
मुझे कभी अकेला नहीं होने दिया।

6. ख़ुशबू और तुम

तुम्हारी कोई परछाई नहीं थी,
फिर भी तुम हर चीज़पर छा जाते थे।
तुम्हारा होना
जैसे हवा में घुली कोई ख़ुशबू —
नज़र न आए,
पर पल-पल महसूस हो।
कभी किसी किताब के पन्नों से,
तो कभी मेरे दुपट्टे की तहों से
तुम झांकते थे।
तुम्हारी यादें
कभी इत्र की तरह तीव्र,
तो कभी मिट्टी सी सौंधी।
तुम्हारा साथ
कभी पूरी तरह पास नहीं था,
पर पूरी तरह गया भी नहीं।
तुम्हारी ख़ुशबू ने
हर मौन को गवाही बना दिया।
तुम्हारे बिना भी
मैं तुमसे दूर नहीं हो सकी।

7. प्रेम और तुम

प्रेम कभी प्रस्ताव नहीं मांगता,
वह बस धीरे से उतरता है —
आँखों से मन में,
मन से आत्मा में।
तुम्हारे साथ
प्रेम कहने की ज़रूरत नहीं पड़ी।
हर मौन, हर प्रतीक्षा,
हर छोटी-सी चिंता
प्रेम का संकेत बन गई।
तुम्हारा मुस्कुराना
मेरी सुबह की शुरुआत था।
तुम्हारा मौन
मेरी रात की शांति।
तुम प्रेम नहीं थे,
प्रेम की परिभाषा थे।
तुम्हें चाहा नहीं,
बस अपना लिया।
और शायद
यही सबसे सच्चा प्रेम था।

8. चाहत और तुम

तुम्हारे लिए चाहत
कभी ज़ोर से कही नहीं -
पर हर सोच में शामिल रही।
तुम्हारे नाम से पहले
मेरे सारे सपने आते थे।
हर बात की शुरुआत
“तुम” से नहीं होती थी,
पर हर अंत तुम्हीं पर होता था।
तुम्हें पाने की कोशिश नहीं की,
बस खोने से डरती रही।
तुम्हारे साथ
कुछ पाने की लालसा नहीं रही,
बस तुम्हारा होना ही काफ़ी लगा।
ये चाहत
कोई मांग नहीं थी,
सिर्फ़ एक स्थायी उपस्थिति थी।
तुम बिन अधूरी थी मैं,
पर तुम्हारे साथ अधूरी ही सुंदर लगी।

9. विश्वास और तुम

तुम्हारे शब्दों से नहीं,
तुम्हारे मौन से मैंने विश्वास सीखा।
जब सब कुछ धुंधला हो,
और कोई केवल आँखों से कहे —
"मैं हूँ",
तो वही विश्वास होता है।
तुम कभी वादे नहीं करते थे,
पर तुम्हारे होने में
एक अटल भरोसा था।
तुम्हारी स्थिरता
मेरी उथल-पुथल को सहेज लेती थी।
मैं टूटती रही,
तुम थामते रहे -
बिना बोले।
तुम पर भरोसा करना
कभी सिखाया नहीं गया,
वो तो जैसे सहज हो गया।
तुम पर विश्वास
मेरे खुद पर विश्वास की पहली सीढ़ी बना।

10. भरोसा और तुम

भरोसा वो था
जब मैंने अपनी सबसे टूटी बात
तुमसे कह दी -
बिना यह सोचे कि
तुम क्या सोचोगे।
तुमने नहीं टोका,
न कोई सलाह दी -
बस सुनते रहे।
तुम्हारे मौन में
मेरे सारे डर समा गए।
तुमसे बात करना
जैसे किसी मंदिर में बैठना हो -
साक्षात मौन में शांति।
तुमने मुझे
मेरे ही भीतर से जोड़ दिया।
तुम पर भरोसा
कोई निर्णय नहीं था -
वो तो समय के साथ
मुझमें गहराता गया।
और आज भी
जब खुद पर शक होता है,
तुम्हारी आँखों में देखती हूँ -
और खुद को स्वीकार कर लेती हूँ।

11. मौन और तुम

तुम्हारे साथ
शब्दों की ज़रूरत ही नहीं थी।
तुम मौन रहते,
पर तुम्हारा होना
हर प्रश्न का उत्तर था।
मैं घंटों तुम्हारे पास बैठ सकती थी -
बिना कुछ कहे,
बिना कुछ सुने।
तुम्हारा मौन
मुझमें एक शांत ध्वनि बनकर बसता था।
उस मौन में
बातें नहीं होती थीं,
भाव बहते थे।
तुम्हारी आँखें
शब्दों से ज़्यादा कहती थीं।
तुम्हारा मौन
कोई दूरी नहीं,
बल्कि एक गहरा साथ था।

12. चुप्पी और तुम

जब तुम चुप रहते,
मैं घबरा जाती थी।
क्या कहने से डरते हो,
या कहने की ज़रूरत ही नहीं समझते?
तुम्हारी चुप्पी
कभी वज़नदार लगती,
तो कभी बोझिल।
मैंने धीरे-धीरे जाना
कि हर चुप्पी में मौन नहीं होता।
कभी असमर्थता होती है,
कभी असुविधा,
कभी कोई अनकहा डर।
तुम्हारी चुप्पी ने
मुझे पढ़ना सिखाया -
शब्दों के परे, भावों की भाषा।
और तब जाकर
मैंने तुम्हारी चुप्पी को स्वीकारना सीखा —
जैसे मौसम को।

13. ख़ामोशी और तुम

तुम्हारे जाने के बाद
सब कुछ वैसा ही था -
सिर्फ़ तुम नहीं थे।
लेकिन सबसे अधिक
जो चीज़ बदली,
वो थी - मेरे भीतर की ख़ामोशी।
तुम्हारे रहते
वो ख़ामोशी मीठी थी,
तुम्हारे बिना -
वो दर्द बन गई।
हर जगह तुम थे,
हर आवाज़ में
तुम्हारी गैर-मौजूदगी की गूंज।
ख़ामोशी अब
सुनाई देती है,
कानों से नहीं,
मन की दरारों से।
तुम चले गए,
पर ख़ामोशी तुम्हारा पर्याय बन गई।

14. कविता और तुम

तुम्हारे होने ने
मेरे शब्दों को लय दी।
पहले जो सिर्फ़ भाव थे,
अब कविता बनकर बहने लगे।
तुमसे पहले
मैं लिखती थी -
तुम्हारे बाद
मैं जीने लगी कविताएँ।
हर पल, हर बात,
कविता में बदल जाती थी।
तुम्हारा नाम
कलम में उतर आता था,
बिना बुलाए।
तुम कविता नहीं थे,
पर कविता की प्रेरणा अवश्य थे।
तुमसे मिलना
मेरे लेखन का सबसे भावुक अध्याय था।

15. बचपन और तुम

तुम्हारे साथ
कुछ भी गंभीर नहीं लगता था।
जैसे हम फिर से
बचपन में लौट जाते थे।
छोटी-छोटी बातों पर हँसना,
बेमतलब की शरारतें,
कभी रूठना,
तो कभी मान जाना।
तुम्हारे साथ
हर पल मासूम था।
दुनिया की सारी जटिलताएँ
तुम्हारे पास आकर सरल हो जाती थीं।
तुममें एक बच्चा छुपा था -
और मेरे भीतर की बच्ची
उसी के साथ खेलती थी।
तुम्हारे साथ
मैंने अपने बचपन को फिर से जी लिया।

16. मौसम और तुम

हर मौसम में कुछ न कुछ बदलता है -
फ़िज़ा, रंग, मन।
पर एक चीज़ जो कभी नहीं बदली,
वो थी - तुम्हारी याद।
गर्मी की दोपहरों में
तुम धूप बनकर चमकते रहे।
सर्द हवाओं में
तुम दस्तानों से भी ज़्यादा पास थे।
बदलते मौसमों के बीच
तुम स्थिर रहे -
हर बार, हर ऋतु में।
तुम किसी एक मौसम का नाम नहीं थे,
तुम तो हर मौसम के बहाने
मेरे पास आने वाले नाम थे।

17. बारिश और तुम

तुम्हारे साथ
बारिश सिर्फ़ भीगने का बहाना नहीं थी -
वो हमारी खामोशियों को भिगोती थी।
पहली फुहार के साथ
तुम्हारी हँसी बरसती थी मुझ पर।
हम बिना छाते भी
महफ़ूज़ महसूस करते थे।
हर बूँद
कोई कहानी लाती थी -
कभी हमारी,
कभी अधूरी सी।
तुम्हारे बिना भी बारिश आती रही,
पर उसमें वो भीगने की चाह नहीं रही।
तुम ही वो मौसम थे,
जिसमें दिल भी भीगता था,
और शब्द भी।

18. धड़कन और तुम

कहते हैं धड़कन जीवन का संकेत है।
मेरे लिए -
तुम्हारा नाम मेरी हर धड़कन में था।
हर बार जब दिल धड़का,
तुम सामने नहीं थे -
पर भीतर कहीं गूंज रहे थे।
तुम्हारे पास होने पर
धड़कनों को समझने की ज़रूरत नहीं पड़ती थी।
पर जब दूर हुए,
तो हर धड़कन तुम्हारा पता पूछती रही।
तुम मेरी धड़कनों में ऐसे बस गए,
जैसे कविता में कोई अनकहा बिंब।
न सांसें रुकीं,
न जीवन -
पर हर धड़कन ने तुम्हारी गिनती की।

19. ख़त और तुम

मैंने तुम्हें कभी लंबा पत्र नहीं लिखा,
बस मन के टुकड़ों को पन्नों पर बिखेरा।
हर शब्द
कोई न कोई अनकही बात था।
तुम तक पहुँचते-पहुँचते
मेरे ख़त
कभी भीग जाते,
कभी अधूरे रह जाते।
पर तुम्हारे जवाब
कभी शब्दों में नहीं आए -
सिर्फ़ तुम्हारी आँखों की नमी में मिले।
वो भी एक संवाद था -
बिना लिफ़ाफ़े, बिना टिकट के।
तुम्हारे लिए लिखे हर ख़त में
मैं खुद को तलाशती रही।

20. सपना और तुम

तुम अक्सर मेरे सपनों में आते थे -
कभी पूरे,
कभी आधे।
नींद और जागरण की उस रेखा पर
तुम्हारा चेहरा सबसे साफ़ दिखता था।
मैंने कभी दावे नहीं किए,
कि तुम मेरे हो -
पर सपनों में
तुम हमेशा मेरे रहे।
कभी-कभी लगता,
तुम सिर्फ़ सपना ही तो हो!
पर उस भ्रम में भी
एक मीठी सच्चाई थी।
तुम्हारा होना
मेरे सपनों की सबसे प्रिय आदत बन गया।

21. पलछिन और तुम

कुछ पल ऐसे होते हैं
जिन्हें समय नहीं गिन सकता।
वो ठहर जाते हैं,
बिना घड़ी की सुई के।
तुम्हारे साथ बिताया हर क्षण
पल नहीं - पलछिन था।
क्षणिक, पर गहराई से भरा।
तुम्हारी हँसी,
तुम्हारी एक नज़र,
एक लम्हा -
जो पूरी उम्र पर भारी पड़ा।
वो छोटे-छोटे टुकड़े
आज भी यादों में चमकते हैं।
तुमने ज़िंदगी नहीं बदली,
बस उन चंद पलछिनों को अमर कर दिया।

22. तन्हाई और तुम

तन्हाई पहले भी थी,
पर तब उसमें सिर्फ़ मैं थी।
तुम्हारे आने के बाद
तन्हाई में भी तुम्हारा साथ मिला -
कभी यादों में,
कभी ख्यालों में।
अब जब तुम दूर हो,
तन्हाई भारी नहीं लगती,
बल्कि गहरी हो गई है।
तुमने तन्हाई को
अजनबी नहीं,
अपना बना दिया।
अब जब मैं अकेली होती हूँ,
तुम भीतर बोलते हो।
इसलिए अब तन्हाई से डर नहीं लगता -
क्योंकि उसमें अब भी तुम हो।

23. दूरी और तुम

दूरी सिर्फ़ मीलों की बात नहीं होती,
कभी-कभी आँखों के सामने रहकर भी
लोग दूर हो जाते हैं।
तुमसे भी हुआ ऐसा -
पास थे, पर नहीं थे।
हमने बातें की,
पर कुछ कहा नहीं।
दिलों की दूरी
शब्दों से नहीं मिटती -
उसके लिए समझना पड़ता है।
तुम दूर नहीं हुए,
पर हमारे बीच
एक मौन की दीवार खड़ी हो गई।
दूरी बढ़ी नहीं,
बस क़रीबियाँ ख़त्म हो गईं।

24. भ्रम और तुम

तुम्हारे बारे में
जो कुछ भी जाना -
वो शायद भ्रम था।
तुम्हारी मुस्कान में सच्चाई दिखी,
पर वो पर्दा निकली।
तुम्हारी चुप्पी को अपनापन समझा,
पर वो शायद असहजता थी।
हम जो सोचते हैं
और जो होता है -
उनमें फर्क होता है।
तुम्हें मैंने जिस रूप में जाना,
वो मेरे मन का प्रतिबिंब था।
तुम क्या थे -
शायद मैं कभी जान ही नहीं पाई।
या शायद -
मैं जानना ही नहीं चाहती थी।

25. उधेड़बुन और तुम

तुम्हें लेकर मन में
हमेशा दो राहें रहीं।
क्या कहा जाए?
क्या छुपा लिया जाए?
तुम्हारी हर बात
सवाल भी बनती,
जवाब भी।
तुमसे जुड़ी हर याद
मीठी भी थी,
कचोटती भी।
मैं समझ नहीं पाई -
तुम थे समाधान
या उलझन?
तुम्हें सोचते-सोचते
मन की गांठें और उलझती गईं।
और इस उधेड़बुन में
मैं खुद कहीं खो गई।

26. पीड़ा और तुम

हर कोई पीड़ा को दर्द कहता है,
पर मेरे लिए -
तुम्हारी अनुपस्थिति ही पीड़ा थी।
न कोई घाव,
न कोई आँसू -
बस एक सूनापन
जो भीतर तक चुभता गया।
तुम्हारे चले जाने के बाद
मैंने जीवन को जिया जरूर,
पर हर दिन
एक धीमा विष था।
तुम्हें खोना,
स्वयं को खो देने जैसा था।
पीड़ा कोई घटना नहीं थी,
वो एक सतत अनुभूति थी
जिसमें हर धड़कन तुम्हें पुकारती रही।

27. आंसू और तुम

पहले रोना कमजोरी लगता था,
तुम्हारे बाद -
आंसू सबसे सच्चे हो गए।
तुम्हारी यादों से लड़ते हुए
जब शब्द चुप हो गए,
तब आंसू बोलने लगे।
उनमें शिकायत नहीं थी,
ना ही दुख की दुहाई,
बस एक गहरी मौन स्वीकारोक्ति थी।
आँसू, जो अक्सर बहते नहीं,
बस पलकों पर रुक जाते हैं -
तुम्हारे नाम की तरह।
तुम्हारे लिए रोना
कमज़ोरी नहीं -
प्रेम की पूर्णता थी।

28. विरह और तुम

विरह कोई एक दिन की बात नहीं होती,
वो तो हर सुबह की शुरुआत में चुभता है
और हर रात की थकान में गूंजता है।
तुम्हारी अनुपस्थिति
मौन नहीं थी -
वो एक तीव्र शोर थी
जिसे मैं ही सुनती थी।
तुम्हारे बिना
कुछ भी संपूर्ण नहीं लगा -
न गीत,
न कविता,
न मैं।
विरह कोई शोक नहीं था -
वो तो तुम्हारी उपस्थिति का
सबसे सच्चा प्रमाण था।
तुम्हारे न होने में भी
मैं तुम्हें जीती रही।

29. सन्नाटा और तुम

सन्नाटा सिर्फ़ शांति नहीं होता,
कभी-कभी वो
कानों में चीख बनकर गूंजता है।
तुम्हारे जाने के बाद
हर आवाज़ धीमी हो गई,
हर बात अधूरी।
पर असली शोर
तो भीतर के सन्नाटे में था।
तुम्हारी बातों की आदत
अब सन्नाटे से टकराती है।
तुम्हारे शब्द नहीं बचे,
पर उनके स्थान पर
एक खालीपन गूंजता है।
सन्नाटा अब एक साथी बन गया है -
तुम्हारी तरह मौन,
पर पूर्ण उपस्थित।

30. रूठना और तुम

तुमसे रूठना
कभी जीत जैसा लगता था,
पर तुम्हारी चुप्पी
हर बार हार बन जाती थी।
तुम नाराज़ नहीं होते थे,
बस मौन हो जाते थे -
और वही
सबसे लंबी दूरी थी।
मेरे शब्द
तुम्हारी चुप्पी से हार जाते थे।
रूठना एक अधिकार था,
जो सिर्फ़ अपनेपन से मिलता है।
पर अब जब तुम नहीं हो,
तो वो अधिकार भी चला गया।
अब न कोई शिकायत है,
न मनुहार -
बस एक खाली जगह है
जहाँ तुम्हारा उत्तर आता था।

31. भूल और तुम

तुम्हें चाहना भूल थी या
तुम्हें खो देना?
या शायद -
तुम्हें पहचानने में देर कर देना।
तुम्हारे इशारों को
मैंने भाव समझा,
और तुम्हारे मौन को
समर्पण।
अब सोचती हूँ -
क्या जो हम समझते हैं
वो सच होता है?
या वो सिर्फ़
हमारे भीतर की कोई उम्मीद होती है?
तुम्हें भूल मानूँ
या स्वयं को?
क्योंकि तुम नहीं बदले,
मैं ही ज़्यादा देख बैठी थी।

32. क्षमा और तुम

तुम्हें क्षमा करना
कोई निर्णय नहीं था -
बस एक शांति की तलाश थी।
मैंने बहुत कुछ सहा,
पर तुम्हारी जगह
मन से मिटा नहीं सकी।
तुम्हें माफ़ करना
तुम्हारे लिए नहीं,
अपने भीतर की गांठों को खोलने जैसा था।
हर घाव को बार-बार देखना
सिर्फ़ पीड़ा देता था।
जब तुमसे जुड़ी पीड़ा को
आँखों में भरकर बहा दिया,
तो भीतर
हल्कापन उतर आया।
क्षमा कोई उपकार नहीं -
वो खुद से किया गया
एक सुंदर समझौता है।

33. लौट आना और तुम

कभी-कभी लगता है
तुम लौट आओगे -
जैसे मौसम।
एक सुबह आएगी
और तुम फिर उसी मुस्कान के साथ
सामने खड़े होगे।
पर मौसम तय होते हैं,
और तुम...
बस एक संभावना हो।
मन चाहता है
कि एक बार और
तुम वही बनकर लौटो
जिन्हें मैंने प्रेम किया था।
पर शायद
तुम लौटो भी,
तो वो तुम नहीं होगे
जिसे मैं जानती थी।
कभी-कभी
लौटना भी एक भ्रम होता है।

34. समर्पण और तुम

तुम्हें पाकर मैंने
खुद को खोया नहीं -
बल्कि पाया।
तुम्हारे आगे जो कुछ भी समर्पित किया,
वो मेरे अहं का त्याग था -
प्रेम की भाषा में।
समर्पण कभी झुकना नहीं होता,
बल्कि
स्वेच्छा से बह जाना होता है।
तुम्हारी मुस्कान,
तुम्हारा मौन,
तुम्हारा होना -
सब कुछ में
मैं खुद को अर्पित करती चली गई।
मैंने चाहा नहीं
कि तुम भी वैसा ही दो,
क्योंकि समर्पण
लेन-देन नहीं होता।
वो तो बस -
निर्विवाद प्रेम की अभिव्यक्ति होता है।

35. समझौता और तुम

कभी सोचा नहीं था
कि प्रेम में भी
समझौते करने पड़ते हैं।
पर जब तुम पास थे
और फिर भी दूर,
तो मैंने सीखा -
हर साथ होना
पूरा होना नहीं होता।
तुम्हारे और मेरे बीच
जो खाली जगह थी,
उसे भरने के लिए
मैंने कई बार अपने हिस्से के सवालों को छोड़ा।
तुमसे कुछ नहीं माँगा,
क्योंकि माँगना
तोड़ देता है।
जो चाहा
उसे समय के हवाले किया -
और यही मेरा
सबसे कठिन समझौता था।

36. सफर और तुम

तुम्हारे साथ सफर शुरू तो हुआ,
पर मंज़िल का पता कभी नहीं चला।
हर मोड़ पर तुम साथ थे,
फिर भी रास्ते अकेले लगते रहे।
तुम चलते रहे
ख़ामोशी से -
और मैं पूछती रही दिशा।
सफर सुंदर था,
क्योंकि उसमें तुम थे।
लेकिन शायद
तुम्हारे पास कोई मंज़िल नहीं थी।
मैं चलती रही,
तुम रुकते रहे
या बदलते रहे रास्ता।
अब जब पीछे मुड़ती हूँ,
तो महसूस होता है -
सफर तुम्हारा नहीं,
मेरा ही था।

37. मंज़िल और तुम

तुम्हें मंज़िल समझ बैठी थी,
और इसी भ्रम ने
मुझे हर रास्ते पर ठहरा दिया।
तुम तक पहुँचना
जैसे जीवन का उद्देश्य बन गया था।
पर एक दिन समझ आया -
तुम रास्ता थे ही नहीं,
तुम तो मौसम थे।
तुम्हारी दिशा अलग थी,
मेरा ध्येय कुछ और।
मंज़िल वो होती है
जहाँ रुक कर सुकून मिले -
पर तुम्हारे पास
हर ठहराव में बेचैनी थी।
अब जानती हूँ -
प्रेम मंज़िल नहीं होता,
अगर वह स्वयं रास्ता न हो।

38. परछाई और तुम

तुम्हारा साथ
सूरज की तरह था -
चमकता, गर्म, और
कभी-कभी चुभता हुआ।
मैं अक्सर तुम्हारी परछाई में
सुकून ढूँढती रही,
जहाँ न रोशनी थी,
न अँधेरा -
बस एक बीच का सा सन्नाटा।
तुम सामने थे,
पर पूरी तरह नहीं।
तुम्हारी परछाई में
मैंने खुद को खो दिया -
तुम्हारी छवि के पीछे भागते हुए
मैं अपने रंग भूल गई।
अब जब रोशनी साफ़ है,
तो दिखता है -
तुम थे भी... और नहीं भी।

39. अधूरापन और तुम

तुम पूरे नहीं थे -
पर फिर भी सबसे ज़्यादा थे।
तुमसे जो मिला,
वो मुकम्मल नहीं था
पर गहरा था।
अधूरापन एक खालीपन नहीं,
बल्कि एक ऐसा भाव था
जिसने मुझे रचने की चाह दी।
मैंने हमेशा
तुम्हारी पूरी तस्वीर नहीं चाही,
बस वो हिस्सा
जो मेरे हिस्से आया।
तुम्हारे साथ अधूरा होना
पूरे से बेहतर लगा।
क्योंकि पूर्णता की तलाश में
बहुत कुछ छूट जाता है -
पर अधूरापन
हर दिन नया कुछ जोड़ता है।

40. सपना टूटा और तुम

एक सपना था -
जिसमें तुम थे,
हम थे,
और एक सरल सी मुस्कान थी।
वो सपना
नींद में नहीं,
जागती आँखों में पलता था।
पर जब टूटा,
तो सबसे पहले मैं टूटी।
टूटे हुए सपनों के टुकड़े
चुभते नहीं,
बस आँखों में टिक जाते हैं।
अब वो सपना नहीं है,
पर उसका असर
हर सोच में बाक़ी है।
तुम्हें नहीं खोया मैंने -
एक संभावित भविष्य खोया है।

41. स्पंदन और तुम

तुम्हारे होने से
मेरे भीतर कुछ हरकत करता था -
बिना किसी छुअन के भी
हर कोशिका जाग जाती थी।
तुम्हारे नाम से
धड़कनों की गति बदल जाती,
और एक मौन स्पंदन
मुझे भीतर से भर देता।
ये प्रेम का प्रारंभ नहीं था -
ये तो वो संकेत था
जो भाषा से परे चलता है।
तुम्हें देखा नहीं,
पर महसूस किया -
हर बार, हर जगह।
अब भी जब ध्यान भटकता है,
तो हृदय एक हल्की धुन में थिरक उठता है -
शायद वो तुम्हारे ही नाम की स्पंदना है।

42. साँझ और तुम

साँझ का रंग
हमेशा मुझे तुम्हारी याद दिलाता है -
थोड़ा थका हुआ,
थोड़ा शांत,
थोड़ा रहस्यमय।
दिन की चंचलता के बाद
जब सब थमता है,
तब तुम्हारी यादें
गहराने लगती हैं।
साँझ में कोई आग्रह नहीं होता,
बस एक धीमा सा स्वीकार होता है -
जैसे तुम्हारे होने का एहसास।
तुम कभी दोपहर की तेज़ी नहीं थे,
तुम तो साँझ की तरह
धीरे-धीरे उतरते थे मेरे मन में।
और हर साँझ,
अब भी तुम्हारा इंतज़ार करती है।

43. रात और तुम

रातें कभी डरावनी नहीं लगीं,
जब तुम ख्यालों में होते थे।
तुम्हारे शब्द,
तुम्हारा मौन -
सब कुछ रात की स्याही में
और गहरा लगता।
नींद नहीं आती थी,
पर शिकायत भी नहीं थी।
तुम्हारी अनुपस्थिति
उस अंधेरे में रोशनी बन जाती।
रातें -
जहाँ दुनिया थमती है,
वहीं मेरा मन
तुममें चलने लगता।
हर तारा जैसे
तुम्हारी कोई अधूरी बात कहता हो।
रातें अब भी चुप हैं,
पर तुम्हारे नाम से भरी हुई।

44. सुबह और तुम

सुबहें उम्मीद से भरी होती थीं,
कभी तुम्हारी एक चिट्ठी के इंतज़ार में,
कभी बस तुम्हारे नाम की मुस्कान के लिए।
तुम्हारे साथ
हर सुबह ताज़गी लाती थी -
जैसे नया कुछ शुरू होने वाला हो।
तुम्हारी आवाज़
चाय की भाप में घुली रहती थी,
और मेरी आँखों में
तुम्हारा पहला ख्याल उतर आता।
अब सुबहें आती हैं,
पर थकी हुई -
जैसे उन्हें भी तुम्हारी आदत थी।
प्रकाश तो है,
पर तुम्हारे बिना
वो धूप भी धुंधली लगती है।
तुम्हारे बिना सुबहें जागती नहीं,
बस बीत जाती हैं।

45. जीवन और तुम

तुम्हारे बिना
जीवन अधूरा नहीं था -
पर वो वैसा नहीं रहा,
जैसा तुम्हारे साथ था।
तुम कोई चरम लक्ष्य नहीं थे,
पर एक निरंतर उपस्थिति -
जिससे मेरा होना परिभाषित होता था।
जीवन अब भी चलता है,
समय अपनी चाल से भागता है,
पर उसकी दिशा बदल गई है।
तुम्हारा जाना
कोई अंत नहीं था -
बस मेरे जीवन की
एक गाथा का ठहराव था।
अब जीवन में सब कुछ है -
पर तुम नहीं हो,
और वही सबसे बड़ा अभाव है।

46. पूर्णता और तुम

तुम्हारे साथ सब कुछ सहज था -
कठिनाई भी,
संघर्ष भी,
और मैं स्वयं भी।
तुम्हारा होना
मुझे अधूरा नहीं लगने देता था।
तुम कोई उपलब्धि नहीं थे,
ना ही स्वप्न,
बल्कि वो अनुभूति थे
जिसमें सब कुछ पूर्ण हो जाता था।
तुमसे अलग कुछ माँगने की इच्छा भी नहीं थी -
तुम थे,
तो जीवन पूरा था।
अब जब तुम नहीं हो,
तो समझ आता है -
पूर्णता कोई अवस्था नहीं होती,
वो तो एक साथ होता है - तुम्हारे जैसा।

47. मौन संवाद और तुम

तुमसे बातें करते हुए
शब्दों की ज़रूरत नहीं थी।
हमारा मौन
सब कुछ कह जाता था -
अंतर्मन की हर अनकही बात।
एक नज़र,
एक साँस,
एक धीमा स्पर्श -
और संवाद पूरा हो जाता।
तुम्हारे जाने के बाद
सब कुछ मौन हो गया,
पर संवाद...
अब भी चलता है।
कभी यादों में,
कभी ख़्वाबों में।
तुम अब भी बोलते हो -
बस अब आवाज़ नहीं आती।

48. मृत्यु और तुम

मृत्यु को अंतिम समझा जाता है,
पर तुम्हारे साथ
वो भी एक शुरुआत बन गई।
तुम्हारे चले जाने से
जो शून्यता बनी,
वो किसी शोक से नहीं भरी -
वो प्रेम से गूंजती रही।
तुम मेरे साथ नहीं रहे
पर तुम्हारा होना
हर ओर बिखर गया।
अब मृत्यु
मुझे डराती नहीं -
क्योंकि जहाँ तुम गए,
वहीं मेरा शेष प्रेम ठहरा है।
मृत्यु के बाद भी
मेरे पास
अगर कुछ बचेगा,
तो वो - तुम हो।

49. इंतज़ार और तुम

तुम्हारे लिए इंतज़ार
कभी बोझ नहीं रहा।
वो मेरी सबसे सहज क्रिया बन गया था -
बिना घड़ी देखे,
बिना शिकायत किए।
तुम्हारा आना ज़रूरी नहीं था,
तुम्हारे आने की आशा ही पर्याप्त थी।
हर पल
तुम्हारे नाम का दीप जलता रहा।
अब भी
जब कोई खिड़की खुलती है,
या कोई हवा चलती है -
मन पूछ बैठता है -
“क्या तुम आए?”
इंतज़ार अब जीवन नहीं,
प्रेम की अंतिम श्रद्धांजलि बन गया है।

50. ...और अंत में तुम

सब कुछ लिखा,
सब कुछ जिया -
पर अंत में
नाम सिर्फ़ तुम्हारा ही आया।
तुमसे आरंभ हुआ जीवन,
तुम पर ही जाकर ठहरा।
चाहे कोई राह चली हो,
मोड़ आया हो,
या ठहराव -
हर जगह
तुम ही तुम मिले।
अब शब्द थक गए हैं,
भाव मौन हैं -
फिर भी अंत में
जो बचा है,
वो बस एक नाम है -
...और अंत में - तुम।

संस्थापक
अन्तरा शब्दशक्ति संस्था एवं प्रकाशन

★परिचय★

नाम - डॉ. प्रीति समकित सुराना
स्वतंत्र लेखिका, प्रकाशक,
टैरो-न्यूमरोल जिस्ट, हीलर,
काउंसिलर, रेकी ग्रैंड मास्टर।

शिक्षा - पी.एचडी. (समाज शास्त्र)

कार्यक्षेत्र - व्यवसाय एवं प्रकाशन

सामाजिक क्षेत्र - गौ सेवा, समाज सेवा एवं साहित्य सेवा।

ईमेल - pritisamkit@gmail.com, antrashabdshakti@gmail.com

ब्लॉग - priti-deshlahra.blogspot.com (मेरा मन)

वेबसाइट - antrashabdshakti.com, pritisamkit.com

मो. नं.- **9009423393**

कार्यरत संस्था- अन्तरा शब्दशक्ति संस्था पंजीयन क्रमांक (**04/21/05/207665/19**)

प्रकाशित किताबें- पी.एचडी. थीसिस (समाज शास्त्र), मन की बात (कविता संग्रह), मेरा मन (कविता संग्रह), दृष्टिकोण (आलेख संग्रह), कतरा-कतरा मेरा मन (कथा संग्रह), काश!कभी सोचा होता.. (व्यंग्य काव्य संग्रह), गद्य लेखन का महत्व (आलेख पुस्तिका), विचार क्रांति (हिन्दी पर विशेष विचार संकलन), जोगराज जी का वंशवृक्ष (परिवार परिचय), कर्म इक्कीसा (धार्मिक पुस्तिका), अन्तरा शब्दशक्ति (संस्था परिचय), सुनो! (मेरे मन की बात,..), छोटी-छोटी बातें (टेबिल कैलेंडर), आपातकाल मे सृजन फुलवारी, प्रीत के गीत, सृष्टि मेरे आँचल में,.!, संभवनाथ परिवार (डायरेक्टरी एवं प्रेरक मुक्तक), गुजराती अनुवाद- काश! कभी सोचा होता,..(गुजराती अनुवादक-रक्षित दवे 'मौन'),

500 से अधिक पुस्तकों का संपादन, 100 से अधिक साझा संग्रह में रचनाएँ शामिल, 5 विश्व रिकार्ड (2 इंडिया बुक ऑफ रिकार्ड्स/ 1 एशिया बुक ऑफ रिकार्ड्स/ 1 लन्दन बुक ऑफ रिकार्ड्स/ 1 ओएमजी ऑफ रिकार्ड्स) एवं कनाडा, नेपाल एवं भारत में 100 से अधिक सम्मान प्राप्त।

हिन्द व हिन्दी का सम्मान, है प्रमाण देशभक्ति का.. आइए करें सृजन, शब्द से शक्ति का...

15, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जिला– बालाघाट (म.प्र.), पिन 481331, मो.– 9009423393, ईमेल– antrashabdshakti@gmail.com

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति

अन्तरा शब्दशक्ति के लिंक्स
Website:- www.antrashabdshakti.com
Facebook page:- https://www.facebook.com/antrashabdshakti/
Fecbook group:- https://www.facebook.com/groups/antraashabdshakti/

Antra ShabdShakti Prakeshan

मूल्य 200/–